THE ECONOMIC TIMES

Date:27-02-24

India Gains With a Digital Services Tax

Duty waivers shouldn't widen digital divide

ET Editorials

New Delhi's outreach to end a WTO agreement on dutyfree trade in digital services would appear to be self-damaging. India is a major beneficiary of growth in services trade, and within that, the rise of digital trade, which has been allowed free access through a quarter century of tax moratorium. Tax forgone on import of services such as ecommerce, entertainment and software would be a fraction of the volume of India's technology-enabled services exports that could face tariffs in retaliation. The point, however, is countries that are disadvantaged due to higher duties on manufacturing, say, microchips are unlikely to gain advantage in services like cloud computing.

The moratorium has served its purpose of keeping trade in digital services free without extensive rules over fair play. These rules are unlikely to be codified as long as the tax waiver remains in place. New Delhi has a strong case at Abu Dhabi 13th Ministerial Conference in seeking to sort digital services on a merit scale. Should games receive the same tax treatment as biomedical research? Both activities are increasingly being conducted online. A catch-all approach cannot be perpetuated. The question is: when do you insist on rules for digital trade?

India's timing is right. Cross-border data flows are approaching almost half the value of global merchandise trade, which has an elaborate rulebook. There is some weight to the argument that small enterprises may lose productivity in a fragmented digital trade environment, but it actually strengthens the case for preferential treatment. Expectations from the WTO powwow in Abu Dhabi will, of course, be tempered by the scale of India's ambition on digital trade rules. It would have made some headway by flagging the need for a terminal date for the duty moratorium to place the trade in digital services on a firmer footing. Trade does not benefit if duty waivers open up the digital divide.

Date:27-02-24

Hope to Lower OOPE On Healthcare Front

ET Editorials

High out-of-pocket expenditure (OOPE) on healthcare has been a significant worry for Indians. According to a 2022 WHO report, high OOPE on health impoverishes some 55 million Indians annually, with over

17% households incurring catastrophic levels of health expenditures every year. This high cost has serious cascading impacts, reveals a new Aiims report. Households are often forced to significantly reduce the quantity and quality of major dietary items, such as fruit, vegetables, meats and eggs when a patient is at home. Rural areas are worst hit.

In 2023, National Health Accounts reported a reduction in OOPE from 69.4% in 2004-05 to 48.21% in 2018-19. The global average was 18.1% in 2019. Cost of medicines and hospitalisation are prime contributors to high expenditure. Central interventions like Ayushman Bharat and Pradhan Mantri Bhartiya Janaushadhi Pariyojana (PMBJP) have had positive impacts. However, there's still a long way to go for several reasons. One, the public health insurance scheme Ayushman Bharat is underutilised, thanks to a lack of awareness of provisions and processes. Two, there is a rising incidence of non-communicable diseases such as diabetes, and cardiovascular and pulmonary ailments. And, three, there are continued challenges in controlling infectious diseases like tuberculosis and malaria.

Reducing OOPE will require higher public spending on healthcare, including strengthening the jan aushadhi kendra network, improving primary healthcare and hiring an adequate number of medical personnel. Tackling the drivers of poor public health on mission mode — air and water pollution and sanitation, particularly handling and management of municipal waste — is required for lowering OOPE and better health outcomes.

दैनिक भास्कर

Date:27-02-24

किसानों की आय बढ़ाने के विकल्प खोजने होंगे

संपादकीय

करीब 13 साल बाद आने वाले घरेलू उपभोग व्यय सर्वेक्षण (एचसीईएस) से पता चला है कि पिछले 20 वर्षों में लोगों का रुझान अनाज से ज्यादा अंडा, मांस, मछली, दूध, फल और सब्जी के प्रति बढ़ा है। दूसरा, ग्रामीण भारत में भी खेती करने वालों के मुकाबले अन्य पेश वाले लोग खाने-पीने पर ज्यादा खर्च कर रहे हैं। यानी उनकी माली हालत बेहतर है। इन दोनों तथ्यों को मिलाकर देखें तो सिर्फ खेती पर आश्रित किसानों का वर्तमान ही नहीं भविष्य भी खतरे में है क्योंकि सांख्यिकी का मशहूर 'एंजेल कर्व' बताता है कि आय बढ़ती है तो लोग अनाज कम और पशु-प्रोटीन ज्यादा खाते हैं। ऐसे में केवल गेहूं-चावल की खेती करना या एमएसपी की मांग करना क्या स्थिति और समय के अनुकूल है ? अगर खाद्यान्न लोगों के उपभोग से ज्यादा है तो सप्लाई - डिमांड के सिद्धांत के तहत सस्ता होगा ही । लिहाजा किसानों को फसल विविधीकरण करना ही होगा। फिर इन किसानों को यह भी देखना होगा कि पड़ोस में रहने वाले लेकिन अन्य पेशों में लगे लोगों से वे इसलिए कम खर्च करते हैं क्योंकि अनाज की खेती से आय कम है। डेयरी, कुक्कुट एवं मत्स्य पालन या फसल की खेती की ओर उन्मुख होना उन सभी किसानों के लिए तत्काल जरूरी है, जो केवल 23 फसलों पर मिलने वाले एमएसपी की मांग कर रहे हैं। यह बात केवल गेहूं-चावल की खेती पर निर्भर रहने वाले देश के किसानों पर ज्यादा

लागू होती है। भारत में भी सरकार गन्ने से ही नहीं, मक्के से भी एथेनॉल बनाने की नीति पर जोर दे रही है। गरीब शाकाहारियों के लिए आज भी दाल प्रोटीन का प्रमुख स्रोत है लिहाजा आंदोलनकारी किसान भी सरकार द्वारा दलहन की खेती की सलाह पर गौर करें। आगामी जुलाई तक इस सर्वे के सभी निष्कर्ष आने का बाद कई नए नीतिगत फैसले लेने होंगे।

Date:27-02-24

इंटरनेट पर अंकुश लोकतंत्र व कारोबार दोनों के लिए बुरा

अभिषेक रखेजा, (वॉशिंगटन डीसी स्थित टिप्पणीकार)

22 फरवरी को एक्स (ट्विटर) ने घोषणा की कि उसने दिल्ली में चल रहे किसानों के विरोध-प्रदर्शन से जुड़े कई सोशल मीडिया अकाउंट हटा दिए हैं। साथ ही उसने बताया कि यह कार्रवाई भारत सरकार द्वारा जारी कार्यकारी आदेशों के कारण की गई थी, जिसमें इन खातों को निलंबित करने और आदेश न मानने की स्थिति में भारी जुर्माने और कारावास की धमकी दी गई थी। यह पहली बार नहीं है, जब सरकार ने ऐसी सोशल मीडिया सामग्री पर रोक लगाई है, जिसे वह देश-विरोधी मानती है। उसने इस प्रकार के आदेश एक्स ही नहीं, फेसबुक और गूगल जैसे अन्य सोशल मीडिया दिग्गजों को भी जारी किए हैं।

एलन मस्क के स्वामित्व वाला प्लेटफॉर्म एक्स पहले ही सरकार के आदेशों की आलोचना कर चुका है। उसने इसे अभिव्यक्ति की आजादी पर बंदिश बताया है। जहां सरकार के आदेश की कानूनी वैधता का निर्णय तो अदालतों में ही किया जाएगा, फिर भी कुछ बातें याद रखी जानी चाहिए। पहली यह कि इंटरनेट तक खुली पहुंच और बिना किसी डर-अंदेशे के अपनी राय व्यक्त करने की क्षमता लोकतंत्र की प्रमुख आधारशिला है। इंटरनेट की परिकल्पना ही एक अति-लोकतांत्रिक और अभूतपूर्व मंच के रूप में की गई थी, जो कई अन्य चीजों के साथ-साथ विचारों के आदान-प्रदान की भी सुविधा देता है। साथ ही, यह भी सच है कि सोशल मीडिया कंपनियों को उनकी खामियों के लिए जवाबदेह बनाने के लिए बहुत काम करने की जरूरत है। दरअसल, उनके द्वारा उपभोक्ताओं के डेटा की हैंडलिंग, बड़े पैमाने पर गलत सूचना देने और नफरत फैलाने वाले कंटेंट को बढ़ावा देने के आरोप लगे हैं, जिनकी दुनिया भर में आलोचना हुई है। साथ ही, उन्हें भारत सहित दुनिया के विभिन्न हिस्सों में इन सभी पहलुओं पर कानूनी जांच का भी सामना करना पड़ता है और यह उचित भी है।

लेकिन यह याद रखना भी महत्वपूर्ण है कि एक्स, गूगल और फेसबुक जैसे प्लेटफॉर्म से भारतीय ग्राहकों के उपभोक्ता-डेटा की सुरक्षा के लिए और अधिक प्रयास करने की मांग करना और उन्हें ऐसे कंटेंट हटाने का आदेश देना जिसमें भारत सरकार की आलोचना की गई हो, इन दोनों में अंतर है। अगर सोशल मीडिया पर कुछ नेताओं या सरकार की नीतियों की आलोचना की जाती है तो इसे भारत-विरोधी नहीं मान लेना चाहिए। यह सच है कि सोशल मीडिया के साथ बहुत सारी समस्याएं हैं, लेकिन इसके बावजूद यह फ्री-स्पीच और निडर होकर अपने विचार रखने का एक माध्यम है। इन अधिकारों की रक्षा भारतीय संविधान के तहत की जाती है और सरकार को जनता के प्रति जवाबदेह बनाना एक संवैधानिक कर्तव्य भी है।

इंटरनेट पर असहमतियों पर अंकुश लगाना जहां अलोकतांत्रिक है, वहीं यह व्यवसाय के लिए भी बुरा है। कंटेंट की सेंसरशिप के जरिए ऑनलाइन फ्री-स्पीच पर रोक लगाने के अलावा भारत की केंद्र और राज्य सरकारें दुनिया के किसी भी दूसरे देश की तुलना में सबसे अधिक इंटरनेट-शटडाउन करती हैं। माना कि गूगल, एक्स और मेटा के लिए भारत एक विशाल बाजार है, लेकिन एक दिन उनका धैर्य भी चुक सकता है। चीन का ही उदाहरण लें। वह दुनिया में इंटरनेट पर सबसे कड़ा नियंत्रण लगाने वाले देशों में से एक है। लेकिन सूचना पर अंकुश और बोलने की आजादी पर लगाम के कारण ही गूगल और मेटा वहां काम नहीं करते हैं।

चीन की तुलना में भारत में इंटरनेट कहीं अधिक स्वतंत्र है, लेकिन यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि सोशल मीडिया प्लेटफॉर्मों को अपनी सरकार के खिलाफ आलोचना को कम करने के लिए कहना शी जिनपिंग की याद दिलाने वाला है। टेक इंडस्ट्री और पश्चिम के लोगों के लिए भारत चीन की तुलना में एक जीवंत और लोकतांत्रिक विकल्प का प्रतिनिधित्व करता है। उसकी अपार विकास-क्षमता और उद्यमशील युवा आबादी उसके लिए एक बड़ा अवसर है। हमें इस अवसर को नियंत्रणवादी होकर गंवा नहीं देना चाहिए।

दैनिक जागरण

Date:27-02-24

विश्व शांति-सद्भाव की नई आस

विकास सारस्वत, (लेखक इंडिक अकादमी के सदस्य एवं वरिष्ठ स्तंभकार हैं)

भारत सहित कई देशों में इस समय पुरातन गौरव, देशज संस्कृति एवं धर्म विचार-विमर्श के केंद्र बिंदु बन रहे हैं। इसके चलते देशज धर्मानुयायी विश्व मंच पर अपनी उपस्थिति दर्ज करा रहे हैं। इस कड़ी में कुछ समय पहले असम के डिब्रूगढ़ में विश्व भर के देशज धर्मों का एक महासम्मेलन आयोजित हुआ। इस सम्मेलन में 33 देशों से आए 400 प्रतिभागियों ने प्राचीन जीवन परंपराओं के महत्व पर चर्चा की। इस अवसर पर असम के मुख्यमंत्री हिमंत बिस्वा सरमा ने दुनिया भर के स्वदेशी धर्मों को पुनर्जीवित करने और उनकी सांस्कृतिक विरासत की रक्षा का संकल्प दोहराया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक मोहन भागवत ने ज्ञान-विज्ञान के प्रसार के बावजूद दुनिया भर में चल रहे संघर्ष और सामाजिक समस्याओं की ओर ध्यान आकर्षित किया। संघ प्रमुख ने भौतिक प्रगति के बावजूद कायम वैश्विक संघर्ष का कारण अध्यात्म के अभाव और धार्मिक चेतना के ह्रास को बताया। सम्मेलन में इस चिंता की स्वीकृति और उससे लड़ने में स्वदेशी धर्मों की प्रासंगिकता का उद्धरण विभिन्न धर्मों के अनुष्ठानों में प्रकृति पूजन की समरूपता में दिखा। कार्यक्रम का स्वस्तिवाचन एक यजीदी बुजुर्ग द्वारा पृथ्वी, सूर्य, चंद्र, जल एवं पक्षियों के स्तुतिगान से हुआ। एक कैरेबियन बुजुर्ग ने अपने पारंपरिक अनुष्ठान में जल और पौधे का अभिषेक किया।

अरुणाचल प्रदेश की न्यीशी जनजाति ने सूर्य भगवान की उपासना में भजन गाया। एक ही मंच से सात महाद्वीपों के आठ धर्मानुयायियों द्वारा वैश्विक कल्याण के लिए किया गया अनुष्ठान विविधता में एकता, वैश्विक भाईचारे और धार्मिक मूल्यों की सार्वभौमिकता को तो प्रदर्शित कर ही रहा था, इस पर भी सोचने को विवश करता था कि एकेश्वरवादी इब्राहिमी मतों ने प्राचीन विश्व को कितना बदल दिया है।

एकेश्वरवाद के प्रसार और प्राबल्य द्वारा पैदा हुए संघर्ष के बावजूद इस विषय पर बौद्धिक विमर्श प्रायः लुप्त है। मानव इतिहास ने व्यक्तिगत अहं, राजनीतिक महत्वाकांक्षा, ईर्ष्या और द्वेष के कारण तमाम युद्ध झेले, किंतु केवल अपने ही ईश्वर को दुनिया के हर व्यक्ति द्वारा सच्चा मनवाने के दुराग्रह ने सर्वाधिक रक्तपात किया। कथित दैवीय आदेश के पालन का दावा कर अपने एक ईश्वर के लिए दुनिया जीत लेने की जिद ने ऐसे संघर्षों को जन्म दिया, जो दो-चार पीढ़ी से नहीं, बल्कि सदियों से चले आ रहे हैं और इनके भविष्य में भी समाप्त होने के आसार नहीं। एकेश्वरवादी कट्टरता ने हिंसा और मतांतरण के जुनून द्वारा एशिया से लेकर अमेरिकी महाद्वीपों तक सभ्यताओं को नष्ट किया है। अपनी एकमेव ईश्वरीय सत्ता को स्वीकार न करने के चलते इन मतों ने न सिर्फ मानवता को 'विश्वासी' बनाम 'अविश्वासी' जैसी व्यष्टि में बांटा, बल्कि अविश्वासी करार दिए गए समूहों को नीचा एवं पतित बताकर मानवता का अवमूल्यन भी किया। अविश्वासी समूहों के लिये पैगन, हीथन और काफिर जैसा शब्द प्रयोग घृणा और तुच्छता के भाव से प्रेरित था। इन शब्दों का आशय ऐसे धर्मविरुद्ध, असभ्य और अज्ञानी लोगों से है, जो मूर्तिपूजक होने के नाते आसुरी प्रवृत्ति के हैं। भारतीय उपमहाद्वीप से बंदी बनाई गई महिलाओं-बच्चों का पश्चिम एशियाई बाजारों में बेचा जाना और अफ्रीका से अश्वेत लोगों को पकड़ कर अमेरिकी गुलामी में धकेलना 'अविश्वासी' लोगों के अवमूल्यन के कारण ही सहज उद्यम बन पाया।

एक जनसमूह को हीन समझकर अपने विरोध में स्थापित करने वाली दुर्भावना, जिसे प्राच्यवादी विचारक एडवर्ड सईद ने अन्यीकरण या 'अदराईंजेशन' का नाम दिया, वह असल में एकेश्वरवादी मतों की कट्टरता से ही जन्मी। संपूर्ण मानवता को एकरूपता में ढालने का उद्देश्य रखने वाले मार्क्सवाद को भी कई बार ईसाइयत का मतांतर ही माना जाता है। इसकी पुष्टि मार्क्सवाद का वह खाका भी करता है, जो अन्य इब्राहिमी मतों की तरह 'हमारे साथ नहीं हैं तो आप हमारे विरुद्ध हैं' जैसे सोच में बंधा हुआ है। इसकी तुलना में बहुईश्वरवादी भारत-सद्भाव और सहिष्णुता का प्रतिमान रहा है। यही नहीं, मिस्र, रोम, ग्रीस, फारस, बेबीलान और चीन आदि विश्व की सभी महान सभ्यताएं बहुईश्वरवादी रही हैं। कभी फैरो अखेनातेन जैसे शासक ने क्रूर एकेश्वरवाद थोपा भी तो जनता ने उसकी मृत्यु उपरांत उसे खारिज कर दिया। इस्लाम से पहले का अरब भी बहुईश्वरवादी होने के नाते धार्मिक दृष्टि से सहिष्णु था। जिस काबे में आज गैर-मुस्लिमों का प्रवेश वर्जित है, वहां सभी अरब कबीलों के ग्राम देवताओं का एक ही प्रांगण में वास था। बहुईश्वरवादी पुरातन सभ्यताओं में दूसरी सभ्यताओं के ईश्वरों के लिए भी सम्मान था। विजयी यवनों के आगमन के बाद गंधार कला शैली में ग्रीक प्रतिमानों में बनी बुद्ध की तमाम मूर्तियां इसका उदाहरण हैं।

ईश्वर एक है या अनेक अथवा उसका अस्तित्व है भी या नहीं, यह ऐसी अंतहीन बहस है, जिस पर सर्वस्वीकार्य मत कभी नहीं बन सकता, परंतु यह तय है कि केवल बहुईश्वरवाद ने देवत्व को नारी रूप में स्वीकारा है। प्रकृति पूजा को महत्व देने के कारण बहुईश्वरवाद ने अमूर्त, काल्पनिक, निराकार सत्ता के स्थान पर मूर्त, गोचर शक्तियों का आह्वान किया है। ईश्वर की अनेक रूप में स्वीकार्यता, सहिष्णुता और सामंजस्य को एक प्राकृतिक भाव बनाती है। ऐसा विश्वदर्शन पर्यावरण, लैंगिक असमानता और नस्लभेद जैसी समस्याएं नहीं उपजने देता। विश्व शांति और सौहार्द की बहाली में बहुईश्वरवाद की भूमिका महत्वपूर्ण है।

अमेरिकी मूलनिवासियों के भारी दबाव ने पिछले वर्ष ही पोप को 1452 में जारी 'डाक्ट्रिन आफ डिस्कवरी' का खंडन करने पर मजबूर किया। यूरोप के कैथोलिक साम्राज्यों द्वारा "खोजी" गई जमीनों पर उन्हें मालिकाना हक देने वाले इस अमानवीय अध्यादेश का खंडन आज जमीनी स्थिति तो नहीं बदल सकता, लेकिन यह देशज धर्मों की नैतिक जीत है। पश्चिमी देशों में बहुईश्वरवादी देशज धर्मों की ओर रुझान बढ़ा है। डेनमार्क, आइसलैंड और लिथुआनिया में तो ऐसे लोगों की अच्छी-खासी संख्या हो गई है। हालांकि देशज एवं बहुईश्वरवादी धर्मों के समक्ष अपना सम्मान और पुरातन गौरव पाने की लड़ाई अभी लंबी है। इस दिशा में विश्व भर के देशज धर्मों को साथ मिलकर साझा मंचों पर आने की आवश्यकता है। सबसे बड़ी आबादी वाला बहुईश्वरवादी देश होने के नाते भारत से इस प्रयास के नेतृत्व की सदा अपेक्षा रहेगी।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date:27-02-24

मजबूत विकास के लिए संघवाद जरूरी

नितिन देसाई

हर बड़े और विविधतापूर्ण देश में संघवाद राजनीतिक स्थिरता ही नहीं बल्कि आर्थिक विकास के लिए भी मायने रखता है। भारत जैसे विविधता वाले देश में अपेक्षित विकास नीतियां और कार्यक्रम बनाने के लिए प्रांतीय और उप प्रांतीय स्तर पर सत्ता के विकेंद्रीकरण में स्थानीय दशाओं का ध्यान रखना होगा और यह केंद्र के विकास लक्ष्य और तरीकों से ज्यादा प्रभावी साबित हो सकता है।

पिछले तीन दशकों में चीन का तेज विकास एक उदाहरण है। नोबेल पुरस्कार से सम्मानित अर्थशास्त्री रॉनल्ड कोस और उनके सहयोगी निंग वांग ने करीब एक दशक पहले लिखे एक शोध पत्र में यह तर्क दिया था कि इस तरह वृद्धि में तेज रफ्तार की व्याख्या विकास के मामलों में केंद्रीय सत्ता के कमजोर या हल्का होने के जरिये की जा सकती है। उनके मुताबिक चीन में विकेंद्रीकरण का उभार बाद में हुआ, 1962 के बाद जब चीन के प्रांत, नगर पालिकाओं, काउंटियों और यहां तक कि छोटे शहरों ने निवेश और स्थानीय अर्थव्यवस्था के विकास के लिए रणनीति बनाने के लिए खुली स्पर्धा की।

इसमें कहा गया है, 'चीन एक विशाल प्रयोगशाला बन गया था, जहां कई अलग-अलग तरह के आर्थिक प्रयोग एक साथ करने की कोशिश की गई। दूसरे दशक में क्षेत्रीय स्पर्धा मुख्य परिवर्तनकारी ताकत बन गई, जिसने चीन को सदी के अंत तक एक बाजार अर्थव्यवस्था में बदल दिया।' चीन में विकेंद्रीकरण की नीति की इस शानदार सफलता से एक अहम सबक मिलता है कि भारत में भी हमें इस पर विचार करना चाहिए जहां कि पिछले सात दशकों से भी ज्यादा समय से विकास के नियोजन और कार्यक्रम पर केंद्र सरकार का सख्त नियंत्रण रहा है। लेकिन चीन एक अधिनायकवादी देश है और वहां सभी प्रांतों, उप प्रांतों और शहरों में एक ही राजनीतिक दल का शासन है। विकेंद्रीकरण का जो सकारात्मक पक्ष है वह पूरी तरह आर्थिक ही है।

दूसरी तरफ, भारत एक लोकतांत्रिक देश है जहां राज्यों में अलग-अलग दलों की सरकारें हैं। इसकी वजह से कई बार ऐसा भी होता है कि किसी राज्य में अगर केंद्र में सत्तारूढ़ दल के विरोधी पार्टी की सरकार है तो उसे भेदभाव का सामना करना पड़े। हाल में कर्नाटक की शिकायत इसका एक उदाहरण है। ज्यादा गंभीर उदाहरण हाल में वह चर्चित आरोप रहा जिसमें कहा गया कि वृहन्मुंबई महानगरपालिका विकास कार्यों के लिए फंड के आवंटन में सत्तारूढ़ दल के विधायकों के प्रति जबरदस्त पक्षपात दिखा रही है। इसलिए, भारत में विकेंद्रीकरण का मामला न केवल बेहतर विकास प्रदर्शन के वादे पर टिका हुआ है, बल्कि अधिक सौहार्दपूर्ण राजनीति की संभावना पर भी निर्भर है।

भारत में विकेंद्रीकरण को अंतर-राज्यीय प्रतिद्वंद्विता को बढ़ावा देने वाला नहीं बल्कि उनके बीच व्यापारिक बाधाएं खत्म करने वाला होना चाहिए। ऐसा इसलिए कि हम 1992 के बड़े उदारीकरण कदम के बाद एक एकीकृत बाजार अर्थव्यवस्था, भौतिक बुनियादी ढांचे के पर्याप्त विकास और संचार, इंटरनेट मार्केटिंग तथा यूपीआई आधारित भुगतान के लिए तीव्र डिजिटल सुविधाओं की तरफ बढ़ रहे हैं। एक एकीकृत राष्ट्रीय बाजार की तरफ कदम बढ़ाने का महत्त्वपूर्ण उदाहरण वस्तु एवं सेवा कर प्रणाली का लागू होना है।

राज्य स्तरीय विकेंद्रीकरण को बढ़ावा देने के लिए दो क्षेत्रों में नीतिगत समायोजन करना होगा। पहला, अपनी दशाओं के मुताबिक उपयुक्त विकास रणनीति तैयार करने के लिए राज्यों को ज्यादा लचीलापन दिखाना होगा। दूसरा, राजकोषीय प्रणाली इस तरह की रखनी होगी कि राज्यों को बिना रोकटोक ज्यादा संसाधन और पूंजी बाजार तक पहुंच हासिल हो।

विकास की रणनीति तैयार करने में लचीलेपन की जरूरत इसलिए ज्यादा है कि भूमि, जल, खनिज संसाधन, जलवायु दशाओं, संख्या, आयु-संरचना और कौशल के लिहाज से मानव संसाधन, उद्यमिता क्षमता और अन्य कई मामलों में अलग-अलग राज्यों में काफी अंतर है। इस बात की निश्चित रूप से आशंका रहती है कि बेहतर संसाधन संपन्न राज्य तेजी से प्रगति करेगा, एक ऐसा जोखिम जो अभी भी विकास रणनीति पर मजबूत केंद्रीय नियंत्रण के दौर में स्पष्ट दिखता है। विकास रणनीति के विकेंद्रीकरण से राज्यों के बीच गहरी होती इस खाई को कम किया जा सकता है, लेकिन इसके लिए उन्हें इस मामले में ज्यादा अंतर की गुंजाइश देनी होगी कि किन फसलों को प्रोत्साहित करना है, किस तरह की कृषि मार्केटिंग को प्रोत्साहित करना है, किस तरह के औद्योगिक निवेश लाने की कोशिश या आकर्षित करना है, शिक्षा और स्वास्थ्य के किस क्षेत्र में सरकारी मदद को प्राथमिकता देनी है आदि।

विकेंद्रीकरण के साथ ही केंद्र सरकार की विकास रणनीति तैयार करने में भूमिका बदल जाएगी, और उसे अंतर-राज्यीय सुविधाओं खासकर भौतिक और डिजिटल बुनियादी ढांचे, विदेश व्यापार नीति संबंधी विचार-विमर्श और राष्ट्रीय सुरक्षा, कानून-व्यवस्था से गहराई से जुड़े विकास संबंधी मसलों पर ज्यादा ध्यान केंद्रित करना होगा। तो राष्ट्रीय स्तर के चुनावों में किसी राजनीतिक दल का हिस्सा लेना इस बात पर निर्भर होना चाहिए कि उक्त मसलों पर उसकी क्षमता और प्रभावशीलता कितनी है, बजाय इसके कि वह किसानों, गरीब परिवारों आदि को खैरात के रूप में कितनी रकम देने को तैयार है।

विकास के प्रबंधन का विकेंद्रीकरण प्रभावी हो, इसके लिए हमें राजकोषीय ढांचे को नए सिरे से डिजाइन करने की जरूरत है, ताकि सार्वजनिक कोष ज्यादा स्पष्ट तरीके से उस प्रशासन के हाथों में पहुंचे जो विकास की नीतियों और कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के लिए जिम्मेदार हैं।

वर्ष 2022-23 में राज्यों ने समेकित सरकारी व्यय का करीब 55 फीसदी हिस्सा हासिल किया, जबकि उन्होंने समेकित सरकारी कर राजस्व का सिर्फ 38 फीसदी ही जुटाया और सरकार की बाजार से उधारी में उनका हिस्सा 31 फीसदी था। पिछले वित्त आयोग ने यह तय किया था कि केंद्र सरकार के साझा करने योग्य करों का 41 फीसदी हिस्सा राज्यों को दिया जाएगा। लेकिन सच्चाई यह है कि 2022-23 में केंद्र सरकार के संग्रहित करों में से राज्यों को सिर्फ 30 फीसदी हिस्सा ही मिल पाया क्योंकि केंद्र सरकार के प्रत्यक्ष संग्रह का बड़ा हिस्सा विशिष्ट उद्देश्य के उपकरों और अधिभारों से आए, जिनको कि राज्यों के साथ साझा नहीं किया जाता।

राज्यों तक विकेंद्रीकरण ही पर्याप्त नहीं होगा। विकास के लिए एक महत्त्वपूर्ण प्रोत्साहन निर्भर करता है शासन के तीसरे स्तर यानी नगर पालिकाओं और पंचायतों की भूमिका पर। इस तीसरे स्तर के जरिये विकेंद्रीकरण संविधान के 73वें और 74वें संशोधन में निहित है। लेकिन वास्तव में राजकोषीय संसाधनों की साझेदारी में उनको शामिल करना, उच्च सरकारी स्तर से विवेकाधीन अनुदान प्रदान करने से ज्यादा नहीं हो पाया है। इन तीसरे स्तर की संस्थाओं को राजकोषीय संसाधनों तक बेहतर पहुंच देनी होगी और रोजगार को आकर्षित करने जैसे स्थानीय प्रबंधन एवं विकास की रणनीति तैयार करने में उनको ज्यादा लचीलापन मुहैया कराना होगा।

विकास के विकेंद्रीकरण के लिए आवश्यक है कि केंद्र सरकार उन क्षेत्रों के लिए कार्यक्रमों और नीतिगत समर्थन पर प्राथमिकताओं और रणनीतियों में भिन्नता को स्वीकार करे जो राज्यों की संवैधानिक क्षमता के भीतर हैं। उसे अपने साझा करने योग्य कर संग्रह से परे जाने की कोशिश भी कम से कम करनी चाहिए। दूसरी तरफ, राज्यों को भी विकास के प्रारूप बनाने में उसी तरह का लचीलापन दिखाना चाहिए और पंचायतों तथा नगर पालिकाओं तक राजकोषीय संसाधनों में निर्धारित हिस्सेदारी के समान सिद्धांत को लागू करना चाहिए। विकास की सत्ता का विकेंद्रीकरण राज्यों, नगर पालिकाओं और पंचायतों को उन करों की उगाही के मामले में ज्यादा आक्रामक होने के लिए प्रेरित करेगा जो उनके नियंत्रण में हैं। विकास के नियोजन और राजकोषीय प्रणाली में संघवाद दोनों लिहाज से जरूरी है, ज्यादा सशक्त विकास को बनाए रखने और राज्यों के संघ यानी भारत में ऊंचे दर्जे के राजनीतिक सद्भाव को सुनिश्चित करने के लिए।

विकास योजना और राजकोषीय प्रणाली में संघवाद अधिक सशक्त विकास बनाए रखने और राज्यों के संघ अर्थात् भारत में उच्च स्तर का राजनीतिक सद्भाव सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है।

जनसत्ता

Date:27-02-24

खर्च का बोझ

संपादकीय

अर्थव्यवस्था के तेज विकास और दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी आर्थिक शक्ति बनने के दावों के बीच हकीकत यह है कि पिछले बारह-तेरह सालों में लोगों का घरेलू खर्च बढ़ कर दोगुने से अधिक हो गया है। सांख्यिकी एवं कार्यक्रम क्रियान्वयन मंत्रालय के ताजा घरेलू उपभोग व्यय सर्वेक्षण के मुताबिक मौजूदा कीमतों पर शहरी क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति औसत घरेलू

खर्च 2011-12 के 2,630 रुपए से बढ़ कर 2022-23 में दोगुने से अधिक यानी 6,459 रुपए हो गया है। इसी तरह ग्रामीण इलाकों में यह 1,430 रुपए से बढ़कर 3,773 रुपए हो गया है। इसमें यह भी जाहिर हुआ है कि गैर-खाद्य वस्तुओं पर खर्च बढ़ा है, जबकि खाद्यान्न पर खर्च पहले की तुलना में कम हुआ है। फलों, सब्जियों, दूध, मछली, खाद्य तेल आदि पर खर्च बढ़ा है। इसी तरह शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन, वस्त्र और दूसरी जरूरी उपभोक्ता वस्तुओं पर खर्च बढ़ा है। इसकी एक वजह तो यह बताई जा रही है कि कोविड के समय शहरों से गांवों की तरफ लौटे लोगों के कृषि क्षेत्र में समाहित हो जाने से उस क्षेत्र का औसत उपभोग खर्च बढ़ा है। मगर यही तर्क शहरी खर्च बढ़ने पर लागू नहीं होता। यह तब है, जब सरकार लगातार महंगाई पर काबू पाने का प्रयास कर रही है।

इन आंकड़ों के समांतर दावा यह भी है कि गरीबी में पांच फीसद की कमी आई है। बहुआयामी गरीबी से करीब तेईस करोड़ लोगों के बाहर निकलने का आंकड़ा भी 'कुछ दिनों पहले चर्चा में था। इन सबके बीच एक तथ्य यह भी है कि प्रति व्यक्ति आय में कोई उल्लेखनीय बढ़ोतरी नहीं हुई है। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति मासिक आय भी लगभग उतनी ही है, जितना प्रति व्यक्ति मासिक खर्च है। मगर इससे प्रति व्यक्ति आय और प्रति व्यक्ति खर्च का समीकरण संतुलित नहीं होता। ज्यादातर परिवारों में एक ही व्यक्ति कमाने वाला होता है, जबकि उस पर निर्भर औसतन तीन लोग होते हैं। इन्हीं आंकड़ों के बीच सरकार का दावा है कि वह बयासी करोड़ लोगों को मुफ्त राशन उपलब्ध कराती है। यानी प्रति व्यक्ति मासिक घरेलू व्यय के औसत में इस आबादी का हिस्सा भी शामिल है। कुछ विशेषज्ञों का कहना है कि चूंकि यह सर्वेक्षण ग्यारह सालों बाद आया है, इसलिए इसमें प्रति व्यक्ति खर्च ऊंचे स्तर पर नजर आ रहा है।

महंगाई और प्रति व्यक्ति खर्च बढ़ना एक स्वस्थ अर्थव्यवस्था की निशानी माना जाता है। मगर इसके साथ-साथ प्रति व्यक्ति आय में भी समतुल्य बढ़ोतरी दर्ज होना आवश्यक है। विचित्र है कि प्रति व्यक्ति आय उस अनुपात में नहीं बढ़ रही है, जिस अनुपात में महंगाई और घरेलू खर्च बढ़ रहा है। इसकी बड़ी वजह रोजगार के नए अवसर सृजित न हो पाना और कोविड के दौरान बाहर हुए लोगों का वापस रोजगार में न लौट पाना है। जो लोग कृषि क्षेत्र में समाहित हो गए हैं, उन्हें भी दैनिक मजदूरी उपलब्ध नहीं हो पाती। कृषि क्षेत्र खुद कई संकटों से गुजर रहा है। मौसम की मार से फसलों के बर्बाद होने और लागत के अनुपात में फसलों की वाजिब कीमत न मिल पाने की वजह से इस क्षेत्र में मजदूरी घटी है। मनरेगा जैसे कार्यक्रमों में भी काम सौ दिन से घट कर मुश्किल से साल में साठ दिन ही मिल पाता है। ऐसे में अंदाजा लगाना मुश्किल नहीं कि घरेलू खर्च बढ़ने से लोगों को किन मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है।

Date:27-02-24

भिक्षावृत्ति से मुक्ति का संकल्प

भिक्षावृत्ति एक सामाजिक समस्या है, जिसे हल करने के लिए सरकार के साथ-साथ सामाजिक संस्थाओं तथा भारत के प्रत्येक नागरिक को प्रयास करना चाहिए।

रंजना मिश्रा

भारत में रहने वाले लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थितियां भिन्न-भिन्न हैं। कुछ लोगों को अपनी आर्थिक तंगी के कारण भिक्षावृत्ति पर निर्भर रहना पड़ता है। मगर अब केंद्र सरकार ने भारत को भिक्षावृत्ति से मुक्त कराने के लिए एक योजना बनाई है। इसके तहत, भिक्षावृत्ति में लगे लोगों को चरणबद्ध तरीके से पहचानकर उनको समाज की मुख्यधारा में लाने का प्रयास किया जाएगा। इसके लिए पहले ऐसे लोगों का सर्वेक्षण किया जाएगा, जिसमें लोगों की उम्र, लिंग, शिक्षा, स्वास्थ्य, आर्थिक स्थिति और भिक्षावृत्ति में लिप्त होने के कारणों आदि का पता लगाया जाएगा। इन लोगों को पुनर्वास के लिए विभिन्न योजनाओं के तहत सहायता प्रदान की जाएगी, जिनमें शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार और सामाजिक सुरक्षा योजनाएं शामिल हैं। शिक्षा और स्वास्थ्य के क्षेत्र में सहायता प्रदान करने से लोगों को आत्मनिर्भर बनने में मदद मिलेगी। रोजगार के अवसर प्रदान करके लोगों को आर्थिक रूप से सशक्त बनाया जाएगा। सामाजिक सुरक्षा योजनाओं से लोगों को बुढ़ापे, बीमारी और अन्य आपात स्थितियों में आर्थिक सहायता मिलेगी।

भिक्षावृत्ति के पीछे गरीबी, अशिक्षा, मानसिक विकार, बाल शोषण आदि मुख्य कारण हैं। गरीबी भिक्षावृत्ति का सबसे प्रमुख कारण है। दरअसल, आर्थिक रूप से कमजोर लोगों के पास रोजगार के अवसर नहीं होते। ऐसे लोग भिक्षावृत्ति को एकमात्र आय का स्रोत बना लेते हैं। इसी तरह अशिक्षित लोगों के पास भी रोजगार के अवसर कम होते हैं। ऐसे लोग भी भिक्षावृत्ति पर निर्भर हो जाते हैं। मानसिक रूप से बीमार लोग समाज में अपना स्थान नहीं बना पाते और भिक्षावृत्ति पर निर्भर हो जाते हैं। बाल शोषण भी भिक्षावृत्ति का एक कारण हो सकता है। दरअसल, जो बच्चे शोषण का शिकार होते हैं, वे भी भिक्षावृत्ति पर निर्भर हो जाते हैं। भिक्षा मांगने वालों में कुछ लोग ऐसे भी होते हैं, जो सिर्फ आलसी होते हैं। ये लोग बीमारी, चोट लगने का या कोई अन्य बहाना बनाकर, अपनी लाचारी दिखाकर भिक्षा मांगते हैं। इनके अलावा कुछ संगठित गिरोह भी हैं, जो पैसों के लालच में गरीबों और लाचारों से जबरदस्ती भीख मंगवाते हैं।

भारत में भिखारियों की कुल संख्या 4 लाख 13 हजार 670 है, जिनमें पुरुषों की संख्या 2 लाख 21 हजार 673 तथा महिलाओं की संख्या एक लाख 91 हजार 997 है। यह संख्या लगातार बढ़ रही है। भिक्षावृत्ति से निरंतर चोरी, हत्या, लूटपाट जैसे बढ़ते अपराध चिंता का विषय हैं। बाल भिक्षावृत्ति के लिए बच्चों की तस्करी के बढ़ते मामले भी चिंताजनक हैं। भिक्षावृत्ति एक सामाजिक समस्या है, जिसे हल करने के लिए सरकार के साथ-साथ सामाजिक संस्थाओं तथा भारत के प्रत्येक नागरिक को प्रयास करना चाहिए। सामान्य तौर पर किसी भी देश और राज्य में भिखारियों का होना इस बात का प्रमाण होता है कि वहां की सरकारें अपने सभी नागरिकों की बुनियादी सुविधाओं का खयाल रखने में सफल नहीं रही हैं। मगर संगठित तौर पर चलने वाले भिक्षावृत्ति तंत्र को मानव तस्करी और अपहरण जैसे अपराधों के साथ जोड़कर देखा जाना चाहिए।

भिक्षावृत्ति मुक्त भारत का लक्ष्य भारत को एक ऐसे देश के रूप में विकसित करना है, जहां कोई भी व्यक्ति भिक्षावृत्ति पर निर्भर न हो। भिक्षावृत्ति मुक्त भारत बनाने के लिए सरकार को भिक्षावृत्ति के मूल कारणों को समझना और उन पर प्रभावी तरीके से काम करना होगा। इसके अलावा भिक्षावृत्ति के खिलाफ जन जागरूकता फैलानी होगी। लोगों को भिक्षा देना बंद करने के लिए प्रेरित करना होगा। साथ ही, भिक्षावृत्ति में लिप्त लोगों के पुनर्वास के लिए प्रभावी योजनाओं को लागू करना होगा। इसके लिए सरकार को शिक्षा और रोजगार के अवसरों को बढ़ावा देकर गरीबी और अशिक्षा को दूर करने का प्रयास करना चाहिए। सरकार को मानसिक स्वास्थ्य सेवाओं को बेहतर बनाकर मानसिक विकारों से पीड़ित लोगों को सहायता प्रदान करनी होगी। बाल शोषण रोकने के लिए सरकार को कड़े कानून बनाने और उन्हें प्रभावी ढंग से लागू करना चाहिए।

भिक्षावृत्ति में लगे लोगों के पुनर्वास के लिए सरकार और समाज को मिलकर काम करना होगा। इन लोगों को आश्रय, कौशल, शिक्षा और अन्य सुविधाएं प्रदान करनी होंगी। दरअसल, भिक्षावृत्ति एक जटिल समस्या है, जिसे हल करने के लिए सरकार को एक समग्र योजना बनानी होगी। लोगों को समझाना होगा कि भिक्षा देने से भिखारी आत्मनिर्भर नहीं बनते, बल्कि उनके जीवन की उन्नति में बाधा उत्पन्न होती है।

केंद्र सरकार ने भिक्षावृत्ति मुक्त भारत के लिए जिन तीस शहरों की सूची तैयार की गई है, उनमें धार्मिक, ऐतिहासिक और पर्यटन- तीन आधारों पर शहरों को चुना गया है। उनमें धार्मिक शहर अयोध्या, ओंकारेश्वर, कांगड़ा, सोमनाथ, उज्जैन, बोधगया, त्र्यंबकेश्वर, पावागढ़, मदुरै, गुवाहाटी हैं। पर्यटक शहर वारंगल, तेजपुर, कोझिकोड, अमृतसर, उदयपुर, कटक, इंदौर, मैसूर, पंचकूला और शिमला हैं। ऐतिहासिक शहरों में जैसलमेर, तिरुवनंतपुरम, विजयवाड़ा, कुशीनगर, सांची, केवडिया, श्रीनगर, नामसाई, खजुराहो, पुदुचेरी हैं। इन शहरों में भिक्षावृत्ति के खिलाफ जन जागरूकता फैलाने और भिक्षावृत्ति में लगे लोगों के पुनर्वास के लिए सरकार कई उपाय कर रही है।

केंद्र सरकार ने भिक्षावृत्ति में लगे लोगों के सर्वेक्षण और पुनर्वास के लिए एक राष्ट्रीय पोर्टल और मोबाइल ऐप तैयार करवाया है। इसका उद्देश्य भिक्षावृत्ति में लिप्त लोगों का डाटा एकत्र करना और उनके पुनर्वास के लिए प्रभावी योजनाएं लागू करना है। इस पोर्टल और मोबाइल एप के माध्यम से, जिला और नगर निगम अधिकारी इन शहरों में प्रमुख जगहों की पहचान कर सकते हैं, जहां लोग भीख मांगते हैं। सर्वेक्षण के दौरान भिखारियों से पूछा जाएगा कि क्या वे भीख मांगना छोड़ना चाहते हैं? इसकी जगह आजीविका के लिए वे क्या करना चाहते हैं? सर्वेक्षण के आधार पर, इन लोगों को पुनर्वास के लिए पात्रता के आधार पर वर्गीकृत किया जाएगा। फिर पुनर्वास के लिए आश्रय, कौशल, शिक्षा और अन्य सुविधाएं प्रदान की जाएंगी। इस पोर्टल और मोबाइल ऐप पर चयनित शहरों में अधिकारियों को आश्रय, कौशल, शिक्षा और पुनर्वास प्रदान करने की प्रगति रपट डालनी होगी। इस पोर्टल और मोबाइल ऐप के माध्यम से भिक्षावृत्ति में लिप्त लोगों के पुनर्वास की प्रक्रिया को अधिक पारदर्शी और प्रभावी बनाया जा सकेगा।

भारत में भिक्षावृत्ति से संबंधित कोई राष्ट्रीय कानून नहीं है। हालांकि कई राज्य और केंद्र शासित प्रदेश भिक्षावृत्ति को रोकने और नियंत्रित करने के लिए आधार के रूप में बांबे भिक्षावृत्ति रोकथाम अधिनियम, 1959 का उपयोग करते हैं। यह कानून भिक्षावृत्ति को अपराध घोषित करता और पुलिस को बिना वारंट भिक्षावृत्ति में लिप्त लोगों को गिरफ्तार करने और उन्हें पुनर्वास केंद्रों में भेजने की शक्ति देता है। इस कानून की प्रभावशीलता पर भी अक्सर बहस होती रहती है। कुछ लोगों का मानना है कि ये कानून भिक्षावृत्ति को रोकने में प्रभावी नहीं हैं, जबकि कुछ का मानना है कि यह कानून भिक्षावृत्ति को कम करने में मददगार है। भिक्षावृत्ति की समस्या को कम करने के लिए कानून को प्रभावी ढंग से लागू करने के साथ-साथ गरीबी, अशिक्षा और बाल शोषण जैसी समस्याओं को भी दूर करना बहुत आवश्यक है।